अत्यन्त सरल है स्याद्वाद

-प्रो. वीरसागर जैन

जैन दर्शन के स्याद्वाद सिद्धान्त को बहुत अधिक जटिल या कठिन कहा जाता है, किन्तु वास्तव में यह बिल्कुल कठिन नहीं है, अपितु बहुत सरल है |

यद्यपि इस बात में भी यदि स्याद्वाद लगाकर देखेंगे तो यह सिद्ध हो जाएगा कि स्याद्वाद कथंचित् कठिन भी है, किन्तु अभी यहाँ हमारी वह विवक्षा नहीं है | अभी तो हम यहाँ यह कहना चाहते हैं कि स्याद्वाद के सम्बन्ध में जो यह बात बहुत अधिक प्रचलित है कि वह एक बड़ा ही गूढ़-गम्भीर एवं जटिल सिद्धान्त है, जिससे कि लोग बहुत भयभीत होते हैं, वैसा यह नहीं है, अपितु यह तो एक बहुत ही सरल सिद्धान्त है |

स्याद्वाद का सीधा-सच्चा अर्थ है कि हमें हर वाक्य 'स्यात्' पद लगाकर बोलना चाहिए, उसके बिना एक भी वाक्य नहीं बोलना चाहिए- 'स्यात्पदेन वदनं स्याद्वाद:' | 'स्यात्' पद का अर्थ होगा कि कही गई बात एक अपेक्षा से उचित है, सभी अपेक्षाओं से नहीं | वस्तु में अनन्त अपेक्षाएँ होती हैं, जो एक साथ नहीं कही जा सकती हैं, क्योंकि वाणी में ऐसी सामर्थ्य नहीं होती है | वाणी अनन्तधर्मात्मक वस्तु के एक-एक अंश को ही कह पाती है | 'स्यात्' पद लगाकर कहने से शेष रही अनन्त विवक्षाओं की सहज स्वीकृति हो जाती है, उनका विनाश नहीं होता | यदि 'स्यात्' पद नहीं लगाएँगे तो उन अनन्त विवक्षाओं का विनाश हो जाएगा और महादोष उत्पन्न होगा |

'स्यात्' पद के सम्बन्ध में भी यहाँ एक बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि संस्कृत भाषा में यह दो प्रकार का है- एक धातुरूप और दूसरा निपात | धातुरूप विधिलिंग लकार के प्रथम पुरुष एकवचन में बनता है, जिसका अर्थ होता है- हो, होवे, होना चाहिए आदि | तथा निपात रूप का अर्थ होता है- कथंचित्, किसी एक अपेक्षा से, एक दृष्टि से | 'स्याद्वाद' में लगा 'स्यात्' पद निपातरूप है , धातुरूप नहीं | बहुत-से लोग 'स्यात्' पद को विधिलिंग लकार वाला धातुरूप समझ लेते हैं और फिर उससे उस पर संशयवाद, सम्भावनावाद आदि के आरोप लगाते हैं | यह अनुचित है | इस प्रकार तो कोई भी छल ग्रहण कर सकता है | 'नवकम्बल' का अर्थ विवक्षित 'नवीन' न समझकर संख्यारूप 'नौ' समझकर विवाद कर सकता है | ऐसा व्यक्ति भाषा की सामान्य व्यवस्था को भी नहीं जानता-मानता है |

अत: 'स्याद्वाद' में 'स्यात्' पद का अर्थ निपातरूप 'कथंचित्' ही स्वीकार करना चाहिए, तभी इसका सही अभिप्राय समझा जा सकता है | (यदि धातुरूप 'स्यात्' समझा तो फिर बड़ी गलती हो जाएगी, जैसा कि अनेक विद्वानों तक को भ्रम हुआ है |)

इस प्रकार स्याद्वाद का आशय हुआ कि प्रत्येक कथन कथंचित्, किसी एक अपेक्षा से, एक दृष्टि से ही सत्य होता है, सर्व अपेक्षाओं/ दृष्टियों से सत्य नहीं होता |

बस यही स्याद्वाद है, इससे आगे कुछ नहीं है; परन्तु जो लोग कथन की अनन्त विवक्षाओं को नहीं पहचानते हैं और इसे सर्वत्र घटित नहीं कर पाते हैं, कदम-कदम पर अटक जाते हैं, इसलिए उन्हें यह बड़ा ही गूढ़-गम्भीर एवं जटिल लगता है | अत: हमें सर्वप्रथम अनन्त विवक्षाओं को सावधानी से समझना चाहिए |

जैनाचार्यों ने कथन की उन अनन्त विवक्षाओं को भी बहुत सरल तरीके से स्पष्ट किया है | यथा- वस्तु में तो अनन्त गुण-धर्म तो हैं ही, परन्तु शब्द-अर्थ-ज्ञान, नाम-स्थापना-द्रव्य-भाव, नैगम-संग्रह-व्यवहारादिक की अपेक्षाओं को भी कोई ध्यान में रखे तो उसे वस्तु के अनन्त आयाम सरलता से समझ में आ जाएँगे और फिर उसे कुछ भी कठिन नहीं लगेगा, अपितु एकदम सरल ही भासित होगा |

इसी बात को भलीभांति स्पष्ट करने के लिए यहाँ कतिपय ऐसे प्रयोग प्रस्तुत किये जा रहे हैं, जो एकदम जटिल या अटपटे लगते हैं, किन्तु अपर विवक्षाओं से देखते ही सत्य समझ में आते हैं | यथा-

अग्नि शीतल होती है -यह वाक्य हमें सर्वथा मिथ्या ही लगता है, किन्तु यदि इसमें अग्नि को अर्थात्मक की बजाय शब्दात्मक या ज्ञानात्मक अग्नि के रूप में ग्रहण किया जाए तो यह वाक्य भी सत्य सिद्ध हो जाएगा, उसमें कुछ भी गलत नहीं रहेगा | शब्दात्मक और ज्ञानात्मक अग्नियां शीतल ही होती हैं | अन्यथा प्रोजेक्टर से दिखाई देनेवाली अग्नि से पर्दा जलने लग जाए, स्वप्न की अग्नि से स्वप्न देखने वाला मनुष्य जल जाए, इत्यादि |

इसीप्रकार 'अभव्य को सम्यग्दर्शन हो सकता है' -यह वाक्य हमें सर्वथा मिथ्या ही लगता है, किन्तु यदि इसमें अभव्य को नाम निक्षेप वाला अभव्य ग्रहण कर लिया जाए तो यह वाक्य भी सत्य सिद्ध हो जाएगा, उसमें कुछ भी गलत नहीं रहेगा |

इसीप्रकार भैंस उड़ गई, सूर्य पश्चिम में निकलता है, सिद्ध दुखी हैं, सिद्ध भगवान जड़ हैं इत्यादि स्पष्ट रूप से मिथ्या प्रतीत होनेवाले वाक्य भी उनकी अपनी-अपनी अन्य विवक्षाओं को लगाने से सत्य स्वीकार किये जा सकते हैं, इसमें किसी को भी कोई आपत्ति नहीं होती है | बस यही स्याद्वाद है | 'स्यात्' पद लगाने का यही अभिप्राय है |

प्रश्न- भैंस उड़ गई -यह कथन कैसे सत्य हो सकता है ?

उत्तर- एक व्यक्ति ने अपनी मुर्गी का नाम भैंस रख रखा था मोटी होने के कारण | एक दिन वह मुर्गी उड़कर कहीं चली गई तो उसने कहा- मेरी भैंस उड़ गई |

प्रश्न- सूर्य पश्चिम में निकलता है -यह कथन कैसे सत्य हो सकता है ?

उत्तर- एक चित्रकार के सभी चित्रों में सूर्य पश्चिम दिशा में उदित होता दिखाई दे रहा था तो लोगों ने कहा कि इनके यहाँ तो सूर्य पश्चिम दिशा में निकलता है |

प्रश्न- सिद्ध दुखी हैं -यह कथन कैसे सत्य हो सकता है ?

उत्तर- भूत नैगम नय से यह कथन भी सत्य सिद्ध होता है, अन्यथा वे अनादि से सुखी सिद्ध होंगे |

प्रश्न- सिद्ध भगवान जड़ हैं -यह कथन कैसे सत्य हो सकता है ?

उत्तर- स्थापना निक्षेप से यह कथन भी सत्य सिद्ध होता है, अन्यथा धातु पाषाण आदि की सिद्ध प्रतिमा को भी चेतन मानना होगा |

इस प्रकार हम देखते हैं कि किसी भी बात (कथन) की अनन्त विवक्षाएँ होती हैं और स्याद्वाद उन सब विवक्षाओं को नष्ट नहीं होने देता है, अपितु उन सबको भलीभांति स्वीकार करके उनकी रक्षा करता है | तथा यह बात हम सबको भी सहर्ष स्वीकार होती ही है, इसमें कुछ भी अटपटा या कठिन नहीं है | इसलिए मेरी दृष्टि में तो स्याद्वाद एक अत्यन्त सरल सिद्धान्त है |

जैन दर्शन का यह स्याद्वाद सिद्धान्त पहले मुझे भी बहुत कठिन लगता था, पर अब समझ में आया है कि यह तो अत्यन्त सरल ही है, क्योंकि यह भाषा का भी सामान्य सिद्धान्त है | स्याद्वाद का कहना है कि वस्तु अनन्तधर्मात्मक है और उसे एक वाक्य से पूर्णत: नहीं कहा जा सकता है, अत: जब भी आप कुछ बोलें तो 'स्यात्' पद लगाकर ही बोलें, तभी आप सत्य कह पाएँगे, अन्यथा आपका कथन असत्य सिद्ध हो जाएगा, क्योंकि वस्तु में अनन्त अपेक्षाएँ होती हैं, केवल एक ही नहीं होती है |

स्याद्वाद सिद्धान्त ने मुझे समझाया कि दुनिया की कोई भी बात ऐसी नहीं है जो सर्वथा असत्य हो और कोई भी बात ऐसी भी नहीं है जो सर्वथा सत्य हो | सभी बातें एक अपेक्षा से सत्य हैं और अन्य अपेक्षा से मिथ्या हैं | अत: हमें किसी भी बात को सुनकर तुरन्त आन्दोलित नहीं होना चाहिए, उसके खण्डन-मण्डन में भी अपनी ऊर्जा नष्ट नहीं करनी चाहिए, अपितु उसकी सही-गलत अपेक्षाओं को ठीक से समझने का प्रयास करना चाहिए |

इस प्रकार स्याद्वाद वस्तुतः जैन दर्शन का कोई जटिल सिद्धान्त नहीं, अपितु सत्य के प्रतिपादन की एक समीचीन पद्धति है, निर्दोष विधि है, वैज्ञानिक कला है और इसमें किसी भी समझदार व्यक्ति को कोई आपत्ति नहीं हो सकती है, अपितु न्यायोचित व्यवस्था होने के कारण सभी को सहर्ष स्वीकृत ही होनी चाहिए | स्याद्वाद को बार-बार जैन दर्शन का सिद्धान्त कहकर साम्प्रदायिक दृष्टि से देखना भी अधिक उचित नहीं है, क्योंकि इससे बहुत लोगों को इसके अध्ययन का अवसर नहीं बन पाता है और वे इससे वंचित रह जाते हैं |

तथापि यदि यह जैन दर्शन का सिद्धान्त है, जैसा कि बड़े-बड़े विद्वान् भी कहते हैं तो मैं कहना चाहूँगा कि यह विश्व के दर्शनों को जैन दर्शन का अमूल्य योगदान है, क्योंकि विश्व का कोई भी दार्शनिक इसे समझकर सरलतापूर्वक सुलझ सकता है, पूर्ण सत्य का साक्षात्कार कर सकता है |

शंका 1. - स्याद्वाद पर आरोप है कि यह संशयवाद है ?

समाधान- नहीं, स्याद्वाद में संशय का लक्षण नहीं घटित होता | संशय का लक्षण है कि विरुद्ध नाना कोटियों में झूलते हुए ज्ञान को संशय कहते हैं, किन्तु स्याद्वाद में ऐसी स्थिति नहीं होती है | यहाँ तो दोनों धर्मों को अलग-अलग दृष्टिकोणों से असंदिग्ध रूप से स्वीकार किया जा रहा है | ये ऐसा है या वैसा है -ऐसा सन्देह नहीं रखा जा रहा है, जैसा कि संशय में रहता है कि यह सर्प है या रस्सी, अथवा यह सीप है या चाँदी |

शंका 2. - स्याद्वाद तो छल है -ऐसा लगता है ?

समाधान- नहीं, स्याद्वाद में छल का लक्षण भी नहीं घटित होता | छल का लक्षण है- वचन का विघात करके अर्थ का विघात करना | जैसे कि नये कम्बल के अर्थ में कहे गये 'नवकम्बल' का अर्थ 'नवीन' न बताकर

संख्यारूप 'नौ' समझना | स्याद्वाद में ऐसी स्थिति नहीं होती है | यहाँ तो वस्तु के अनन्त धर्मों को अलग-अलग दृष्टिकोणों से विशद रूप से स्वीकार किया जाता है |

शंका 3.- स्याद्वाद पर एक और आरोप है कि इससे प्रवृत्ति नहीं बन सकेगी ?

समाधान- यह शंका महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि प्रथम दृष्टि में किसी को भी ऐसा ही लगता है कि यदि अग्नि उष्ण भी है और शीतल भी तो प्रवृत्ति कैसे होगी अथवा एक ही स्त्री यदि पत्नी भी है और बहिन भी तो प्रवृत्ति कैसे होगी | लेकिन यदि थोड़ी-सी गहराई में जाकर विचार किया जाए तो ज्ञात होगा कि यह तो वास्तव में समीचीन प्रवृत्ति का ही सिद्धान्त है | यह कहता है कि यदि आपको उष्ण अग्नि चाहिए तो अर्थात्मक अग्नि ही ग्रहण करना होगा, शब्दात्मक या ज्ञानात्मक अग्नि से आपका प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा | इसी प्रकार पति की अपेक्षा से ही वह स्त्री पत्नी है, अन्य किसी की अपेक्षा से नहीं, पति ही उसके साथ पत्नी जैसा व्यवहार कर सकता है, अन्य कोई नहीं | इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि समीचीन प्रवृत्ति के लिए भी स्याद्वाद सिद्धान्त को स्वीकार करना अनिवार्य है |

शंका 4.- आपने तो स्याद्वाद को सर्वथा सरल ही सिद्ध कर दिया, इसमें भी तो स्याद्वाद लगाना चाहिए था कि यह कथंचित् कठिन भी है ?

समाधान- वह तो हमने स्वयं ही इस लेख के प्रारम्भ में ही कहा है कि स्याद्वाद से तो यह कठिन और सरल दोनों ही सिद्ध होता है, परन्तु अभी यहाँ हम उसके सरल होने वाले पक्ष को मुख्य कर रहे हैं, कठिन वाला पक्ष गौण है | जो लोग अनन्त विवक्षाओं को नहीं पहचान पाते, उनके लिए यह कठिन भी कहा ही गया है- 'श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलांछनम्'' (-आचार्य अकलंक, प्रमाणसंग्रह, 1) |

शंका 4.- स्याद्वाद को नयवाद भी कहते हैं, क्या इन दोनों में कोई अंतर है ?

समाधान- सामान्य दृष्टि से दोनों में कोई अंतर नहीं है | परन्तु सूक्ष्मता से देखा जाए तो स्याद्वाद तो बिना अपेक्षा बताये ही घटित हो जाता है, परन्तु नयवाद उसकी अपेक्षा, उसका नय भी बतलाता है | जैसे वस्तु नित्य भी है और अनित्य भी -इसका नाम स्याद्वाद है, परन्तु वस्तु द्रव्य-अपेक्षा नित्य है और पर्याय-अपेक्षा अनित्य - इसका नाम नयवाद है | स्याद्वाद में अपेक्षा नहीं खोली जाती और नयवाद में अपेक्षा खोल दी जाती है -ऐसा स्थूलत: कह सकते हैं |

शंका 5.- स्याद्वाद को अनेकान्तवाद भी कहते हैं, क्या इन दोनों में कोई अंतर है ?

समाधान- सामान्य दृष्टि से स्याद्वाद और अनेकान्तवाद को एक कहा जाता है, कहा भी जा सकता है, परन्तु सूक्ष्मता से देखा जाए तो दोनों में अन्तर है, स्याद्वाद वाचक है और अनेकान्त वाच्य | अथवा- प्रत्येक वस्तु परस्पर विरुद्ध प्रतीत होनेवाले अनन्त धर्मों को धारण करती है, अनेकान्तात्मक है -ऐसी मान्यता या विचारधारा का नाम अनेकान्तवाद है और उन अनन्त धर्मों को स्याद्वाद के द्वारा ही समीचीन रूप से कहा जा सकता है -ऐसी मान्यता या विचारधारा का नाम स्याद्वाद है | 'वाद' शब्द के दो अर्थ हैं- मान्यता/विचारधारा और बोलना (वदनं वाद:) |

शंका 6.- स्याद्वाद और सप्तभंगवाद में क्या अंतर है ?

समाधान- स्याद्वाद और सप्तभंगवाद को भी सामान्य अपेक्षा से एक कहा जा सकता है, परन्तु सूक्ष्मता से देखा जाए तो इनमें भी अंतर है | स्याद्वाद दो भंग दिखाने मात्र से बन जाता है, परन्तु सप्तभंगवाद में सातों भंग घटित करके दिखाना अनिवार्य है |

शंका 7.- स्याद्वाद का क्या सन्देश है ?

समाधान- स्याद्वाद का सन्देश है कि सिक्के का दूसरा पहलू भी देखा करो | एक ही पहलू देखकर उसे ही पूर्ण मत समझा करो | अथवा स्याद्वाद का सन्देश मात्र इतना है कि आप कभी भी कुछ भी बोलें तो 'स्यात्' पद लगाकर ही बोलें, तभी आप सत्य कह पाएँगे, अन्यथा आपका कथन असत्य सिद्ध हो जाएगा, क्योंकि वस्तु में अनन्त अपेक्षाएँ होती हैं, केवल एक ही नहीं होती है | एक वाक्य से वस्तु को पूर्णत: नहीं कहा जा सकता है | अत: सदैव 'स्यात्' पद लगाकर बोलना चाहिए, ताकि यह स्पष्ट रहे कि कही गई बात एक अपेक्षा से उचित है और उसी समय अन्य भी अनन्त अपेक्षाएँ हैं, जो अभी नहीं कही जा रही हैं | कही भी नहीं जा सकती हैं, क्योंकि वाणी में ऐसी सामर्थ्य नहीं है | वाणी अनन्तधर्मात्मक वस्तु के एक-एक अंश को ही कह पाती है |

शंका 8.- स्याद्वाद पर कुछ और अध्ययन-सामग्री बताइए ?

समाधान- स्याद्वाद पर वैसे तो लगभग सभी शास्त्रों में यत्र-तत्र विपुल सामग्री उपलब्ध होती है, तथापि कुछ स्वतन्त्र अध्ययन-सामग्री मेरी दृष्टि में इस प्रकार है-

1. जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश, भाग 1, पृष्ठ 104 से 111, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली
2. जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश, भाग 4, पृष्ठ 496 से 502, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली
3. आप्तमीमांसा- आचार्य समन्तभद्र, वीर सेवा मन्दिर, नई दिल्ली
4. सन्मतिसूत्र- आचार्य सिद्धसेन, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली
5. नयचक्र- माइल्लधवल, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली
6. स्याद्वादमंजरी- मल्लिषेणसूरि, रायचन्द्र आश्रम, अगास, गुजरात
7. स्याद्वाद : एक अनुशीलन- सम्पादक पं. चैनसुखदास न्यायतीर्थ आदि, जैन विद्या संस्थान, श्रीमहावीरजी, जयपुर
8. स्याद्वाद- पं. जवाहरलाल जैन सिद्धांतशास्त्री, श्री दिगम्बर जैन समाज, सहारनपुर
9. अनेकान्त और स्याद्वाद- डॉ. हुकमचंद भारिल्ल, पं. टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर
10. अनेकान्त और स्याद्वाद- प्रो. उदयचन्द्र जैन, गणेश वर्णी संस्थान, वाराणसी
11. अनेकान्तवाद- डॉ. अशोककुमार जैन, वाराणसी
12. स्याद्वाद-मंगलम्- प्रो. वीरसागर जैन